भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष–1, अंक–4	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा–10.00
सोमवार, 12 सितम्बर' 77	मानद सहसम्पादक: डॉ. महेन्द्र दवे–श्री विमल दवे	प्रति अंक : 1.00

कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी

'हे स्वामी ! आपकी जो भक्ति करता हो उनको तनिक भी दुःख न हो। देना हो तो मुझे दे दो। मेरे रोम-रोम में बिच्छु के दंशों की वेदना हो, किन्तु आप के भक्त को बिच्छु का एक छोटा-सा भी दंश न हो। आप के भक्त के भाग्य में भिक्षापात्र हो तो यह पात्र मुझे दे दो, किन्तु आपके भक्त अन्न या वस्त्र के अभाव में दुःखी न हों।'

ये शब्द किसके हो सकते हैं?

सद्. रामानंदस्वामिजी के उत्तराधिकारी और सत्संग के सुकानी :

सद्गुरु रामानंदस्वामी को अन्तःप्रेरणा से यह तथ्य का साक्षात्कार हो गया था कि सहजानंदस्वामी शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, स्वरुपानुसंधानमय, स्वस्वभावयुक्त साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम ही है और वे ही निश्चित मेरे उत्तराधिकारी है। वास्तव में उनकी सारी शिष्यमंडली में सब से छोटी आयु थी सहजानंदस्वामी की, किन्तु प्रताप और प्रभाव में वे सबसे बड़े थे इसकी प्रतीति न केवल रामानंदस्वामिजी को किन्तु सब को हो चुकी थी।

इस ओर स्वामी रामानंदजी को ये भी स्पष्ट हो चुका था कि अब मेरी जीवनलीला की समाप्ति निकट है, अतः उन्होंने अपना आचार्यपद-अपनी धर्मधुरा सहजानंदस्वामिजी के कोमल किन्तु बलिष्ठ कंधों पर रखने का निश्चय कर लिया। सत्संग में उस समय सद्. मुक्तानंदस्वामी जैसे महान साधु थे, अन्य वृद्ध सन्त थे किन्तु रामानंदस्वामिजी ने आचार्यपद पर सबके सद गुरु के रूप में सहजानंदस्वामी जैसे नवयुवक को प्रतिष्ठित करने का जो सोचा यह निश्चित आश्चर्यकारक घटना थी। किन्तु रामानंदस्वामिजी के इस निश्चय से सब प्रसन्न थे। मुक्तानंदस्वामी ने तो असाधारण उदारचित्त दिखाकर पूर्ण मन से रामानंदस्वामिजी के इस निश्चय का स्वागत किया। 'यह पद मुझे क्यों न मिले?' ऐसा इन्होंने एक क्षण के लिये भी नहीं सोचा।

इस प्रकार सर्व ने अत्यन्त हर्ष से गुरु रामानंद-स्वामिजी के विचार का निर्विरोध स्वीकार किया; किन्तु एक व्यक्ति ने उसका विरोध किया और वे थे स्वयं स्वामी सहजानंद!

उन्होंने गुरु रामानंदस्वामिजी की इच्छा जानकर कहा–

'हे गुरुदेव, आप धर्मरक्षक हो। आप आश्रय लेने वालों को धर्म में प्रतिष्ठित करने में समर्थ हो। किन्तु मैं एक ब्रह्मचारी हूं। सद्गुरु वह है जो अपने आश्रय में आने वाले आबाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष सबके धर्म की रक्षा का कार्य करता है। यह कार्य आप मुझे दे रहे हो। जिस में स्त्री आदि के धर्म की रक्षा का सम्बन्ध प्रमुख है ऐसा

कार्य स्वीकृत करना क्या एक ब्रह्मचारी के लिये ठीक है? मेरा मन अति उद्वेगपूर्ण हो गया है। स्त्री आदि के संसर्ग से तो मैं मानता हूं कि मुमुक्षु एवं मुक्त भी बन्धनग्रस्त हो जाते हैं।'

ऐसे परम रहस्यमय और शास्त्रसिद्धांत शुद्ध वाक्य सुनकर सद्. रामानंदस्वामिजी की प्रसन्नता और बढ़ गई और उन्होंने कहा–

'वास्तव में जो आप कह रहे हो वह शास्त्रसंगत है इस में प्रतिवाद नहीं हो सकता। किन्तु आप केवल ब्रह्मचारी नहीं हो। आप स्वयं नारायण हो, अतः निर्बंध और निर्विकार हो।'

इस प्रकार सद्. रामानंदस्वामिजी ने स्वामी सहजानंद को कह दिया कि आपके स्वरूप का मुझे ज्ञान है और अतः ही धर्मधुरा आपको सुपुर्द करके मैं निश्चिंत होना चाहता हूं।

आखिर सहजानंदस्वामिजी ने गुरु आज्ञा शिरोमान्य की। सद्. रामानंदस्वामिजी ने जेतपुर शहर में असाधारण महोत्सव की रचना करके अनेक संतमहंत और हरिभक्तों की उपस्थिति से सहजानंदस्वामिजी को अपने स्थान पर आचार्यपद पे सुस्थापित किये और सहजानंदस्वामी जब आचार्यपद ग्रहण करते हैं तब उपरोक्त दो वरदान की गुरु रामानंदस्वामिजी से याचना करते हैं। कैसा करुणा से पूर्ण मानस होगा उनका? अतः उनको हम कहते हैं कृपावतार !

- 18 साल की अल्पायु में सत्संग में प्रवेश और इसके केवल **दो ही वर्ष के बाद अपनी बीस साल की आयु में** आचार्यपद ग्रहण करके एक असाधारण जिम्मेदारी एवं कार्यभार उठाना,
- चातुर्वर्ण्य प्रजा को सत्संग की ओर ले जाना,
- धर्म और संप्रदाय को असाधारण रूप में प्रतिष्ठित कर के संप्रदाय का एक कुशल तंत्र बनाना और
- इस में शाश्वत, सनातन चिरकालीन मूल्यों की प्रतिष्ठा करके अपने शुद्ध आचरण द्वारा करोड़ों मुमुक्षुओं को आत्यंतिक कल्याण हेतु मार्गदर्शक बनें ऐसी संतसृष्टि खड़ी करना।

यह सामान्य जिम्मेदारी नहीं थी। वह स्वामी सहजानंदजी ने उठाई और पूर्णरूप से इसे परिपूर्ण की।

यह घटना विश्वधर्म के इतिहास में अजोड़ नहीं तो विरल और आश्चर्यकारक तो है ही।

सद्. रामानंदजी का स्वधामगमनः

सहजानंदस्वामिजी के आचार्य होने के बाद सन् 1858 के मार्गशीर्ष मास की शुक्ला त्रयोदशी के दिन 'फणेणी' नामक ग्राम में सद्. रामानंदस्वामिजी ने सदेह स्वधामगमन किया। उस समय सहजानंदस्वामी की आयु थी इक्कीस साल की।

सहजानंदस्वामी ने गुरु की और्ध्वदैहिक क्रिया शास्त्रविधि अनुसार पूर्ण की। और उसी (त्रयोदशी के) दिन उन्होंने सबको 'स्वामिनारायण' महामंत्र की दीक्षा दी और मन्त्र की महिमा समझा कर सब के मुख से 'स्वामिनारायण' मंत्र का जाप करवाया। इस प्रकार अपने स्वरूप का गान करवाया। तब से यह संप्रदाय 'स्वामिनारायण संप्रदाय' के रूप में जनता में प्रतिष्ठिति हुआ और स्वामी सहजानंदजी 'भगवान स्वामिनारायण' नाम से लोकप्रतिष्ठ हुए।

दूसरे दिन सद्. रामानंदस्वामिजी के सब शिष्यों ने सहजानंदस्वामी को प्रार्थना की कि–'आप रामानंदस्वामी के स्थान पर हो अतः आप अब हम सबके गुरु हो, अब हमारा धर्म क्या है इस का आप उपदेश कीजिए।' सहजानंदस्वामी ने उसी दिन 'फणेणी' में सभा का आयोजन किया और धर्मशास्त्र के आधार पर 'त्यागी' और 'गृही' के धर्म क्या है इसका विस्तृत निरूपण किया इतना ही नहीं, इन्होंने इस धर्म की सिद्धि कैसे होती है इसके साधन भी दिखलाये।

जैसा ही सब ने यह उपदेश सुना सब की चित्तवृत्ति तदाकार हो गई–स्वामिनारायण में लीन हो गई; शोक-शमन हो गया। सर्व ने भावप्रपूर्ण हो कर सहजानंदस्वामिजी का पूजन किया और इनके मुख से 'श्रीजी' 'श्रीजी महाराज' 'महाराज' 'श्रीहरि' ऐसे प्रेममय उद्गार सहजानंदस्वामी जी के लिए अपने आप निकल पड़े। आज स्वामी सहजानंद 'स्वामिनारायण भगवान' हैं, 'श्रीजी' हैं, 'श्रीजी महाराज' हैं, 'महाराज' हैं, 'श्रीहरि' हैं।

शीतलदास व्यापकानंदस्वामी बनेः

स्वामी सहजानंदजी द्वारा इस प्रकार जब धर्मचक्र का प्रारम्भ हुआ उसी समय की एक कहानी है।

शीतलदास नामक एक ब्राह्मण मुमुक्षु भगवान की खोज में निकला था। किसी ने उन्हें कहा होगा कि स्वामी रामानंद समर्थ सद्गुरु है। वे तुझे परमात्मा की प्राप्ति करायेंगे। रामानंदस्वामी की खोज में वह पर्यटन करते-करते 'फणेणी' गांव आ पहुंचा। यहां इनको किसी ने कहा कि हाल ही में स्वामी ने स्वधामगमन किया है। बेचारा ! अपने हीन भाग्य को रोने लगा। सोचा-अब क्या है? घर ही वापस चलो। किन्तु कृपावतार श्रीजी महाराज ने उन्हें कहा–'भैया एक दिन रुक जा। तेरी मन की साध पूरी होगी। तुझे स्वामी रामानंदजी के दर्शन निश्चित होंगे। कल दोपहरी के बाद प्रेम से चले जाना।'

दूसरे दिन सहजानंदस्वामी ने उन्हें समाधि करवाई। उस में शीतलदास ने श्रीजी महाराज को अक्षरधाम में सिंहासन पर देखे और रामानंदस्वामी उनको वन्दन कर रहे थे ! रामानंदस्वामी ने शीतलदास को कहा– 'सहजानंद स्वामी में सब अवतार समाविष्ट है। समाधि से जागृत होने के बाद वह शीतलदास ब्राह्मण ने समाधि में जो दर्शन हुआ था उसका और रामानंदस्वामी ने जो कहा था उसका जिकर किया और स्वंय सहजानंदस्वामी के चरणों में लेट ही गया-प्रार्थना की कि–'मुझे दीक्षा दीजिए।' महाराज ने उन्हें भागवती दीक्षा दी और 'व्यापकानंदस्वामी' नाम दिया।'

बाद में महाराज ने धर्मचक्रप्रवर्तन के लिए 'फणेणी' से यात्रा का प्रारंभ किया और धोराजी, भाडेर, माणावदर, पिलाणा, अगतराई, काळवाणी, मांगरोल आदि स्थानों में गये..... और गांव-गांव जीवों को अभयदान देते रहें। भागवती संतों को भी भिन्न-भिन्न दिशाओं में धर्मोपदेशार्थ विचरण करने की आज्ञा दी और कहा–

'निष्काम, निर्लोभ, निर्मान, निःस्वाद और निःसनेह –इन पांच व्रतों का दृढ़तापूर्वक स्वयं पालन करना और मुमुक्षु आत्माओं को सदुपदेश देना।'

स्वामिनारायण भगवान के ये संत भिक्षान्न का भोजन करते थे और जीवों को सदुपदेश देते थे। इन संतों के उपदेश का प्रधान स्वर था–

'मोक्ष की प्राप्ति संतसमागम द्वारा होती है, क्योंकि वे मनुष्यरूप प्रत्यक्ष स्वरूप में भगवान को अखण्ड धारण करते हैं। अतः ऐसे अवतारपुरुष या भगवत्स्वरूप संत या ऐसे जीवनमुक्त का समाश्रय लेना अत्यंत हितावह है।'*

नीतिमय जीवन की ओर जनसमुदाय को ले जाने का इन सन्तों का विशिष्ट लक्ष्य था।

नीति, सदाचार और अहिंसा का पालन करना,
व्यभिचार नहीं करना,
मांस-मदिरा का सेवन नहीं करना,
आत्महत्या नहीं करना,
चोरी नहीं करना,
किसी पे कलंक नहीं लगाना,
किसी भी देवता की निंदा नहीं करना,
अभक्ष्य भक्षण नहीं करना,
विमुख के मुख से कथा श्रवण नहीं करना,
जुआ नहीं खेलना,

– ये सर्व नियम गृहस्थियों को पालना चाहिए ऐसी इन सन्तों की अनुज्ञा थी। जो नये-नये गृहस्थी सत्संगी होते जा रहे थे वे सर्व अत्यन्त प्रेम से इन नियमों का पालन करते थे।

इस प्रकार स्वामी सहजानंदजी की प्रेरणा से सामाजिक नीतिसुधार का कार्य एक आंदोलन के रूप में जोरशोर से प्रारम्भ हो गया। सन्तों के लिए तो नियम इस से भी कठिन थे। इन को स्त्री एवं धन संपूर्ण वर्ज्य थे। इन के आहार सम्बन्ध में भी नियम अत्यन्त कठिन थे। क्षमा इन साधुपुरुषों का भूषण था। स्वामी सहजानंदजी की आज्ञा थी कि मार मारने वाले के हाथ से मार खा कर भी इनको आशीर्वाद देना है !

इस के अतिरिक्त सहजानंदस्वामिजी ने अनेक अन्न क्षेत्र चलाये। अनेक लोक वहां अन्न ग्रहण करने को आते थे। इस से दो लाभ होते थे; एक जठराग्नि की तृप्ति होती थी और दूसरा-इनमें से मुमुक्षुओं को परमात्मा के प्रकट स्वरूप का सम्बन्ध होता था, अतः इन्हें परमपद की प्राप्ति सुलभ होती थी।

(क्रमशः)

★ ★ ★

Realised Saint's Grace Be Your Refuge

In order to slove the mysterious riddles of life and day to day chaos and confusions

---

* प्रसङ्गमजरं पाशामात्मनः कवयो विदुः।
स एव साधुषु कृतं मोक्षद्वारमपावृतम्॥ भाग.तृ.अ. 25 श्लो. 20

Lord Swaminarayan advocated the creative, dynamic, practical and entrnal philosophy. He also explained the five fundamental eternal entities Viz. Jiva, Ishwar, Maya, Brahman and Para-brahman. For a soloution to these riddles of life which generally originate from the mind or chitta or antahakaran and to overcome all temptations and vices for the most practical and joyous life and spiritual realisation, He advocated the knowledge of its secret and its essance thro' the supremely realised Brahma-Swaroop satpurush or saint as inevitable.

However, the various means and different methods advocated by spiritual heads lead centrally to one fundamental issue of purifying the mind, chitta and eradicating the false identification with the gross body of matter; rigorous disciplines cannot be followed by all the aspirants of various categories. Lord Swaminarayan by His infinite grace and love, therefore personified form of Brahma Swaroop Saints or sadgurus. An aspirant or a devotee has to necessarily reamin in constant association of such a saint or sadguru, lay bare to Him the secrets of his heart and establish his spiritual realtionship by surrendering Him with open mind and simple heart. One has to rely on Him in all moments of stress, disappointment and weakness and trust Him with all his heart - whole and sole without an iota of doubt regarding His goodness, power wisdom and compassion.

By such association and the consequent elevating influence which the saint exerts the soul is easily purified and lifted into the divine consciousness and practically most of the tensions, confusions, conficts vanish in no time enabling the soul to enjoy the real joy, peace of mind, happiness and bliss in this wordly life.Chanting of god's name with the rememberance of such sadguru's instructions and one's personal incidences with Him, the meditation and sincere prayer will thus give concrete result in no time. **There will be a series of spiritual experiences in our daily life. Such surprisng incidences will then stabilize and strengthen our faith and trust in the living existence of the supreme Being or Ultimate Reality.**

May God inspire us all to achieve the goal for Supreme-relations.

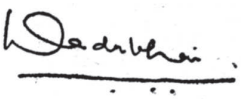

★ ★ ★

दिल्ली में रक्षाबन्धन का पर्व

ता. 4-9-'77 के दिन रक्षाबन्धन का पर्व अशोक विहार के हमारे मंदिर में प.भ. रमेशभाई सोनी (बम्बई) के नेतृत्व में प.भ. भावेशभाई एवम् जयश्री दीदी, अर्चना, लताबहन, चंद्रिकाबहन, रेणु, कमलेश दीदी आदि बहनों ने नवधाभक्ति के श्रेष्ठ आदर्शरूप से अत्यंत उत्साहपूर्वक श्रम लेकर विविध रंग के पवित्रां और राखियों का झूला बनाकर मंदिर में सुन्दर डॅकोरेशन कर के अक्षरपुरुषोत्तम महाराज को झूले में झुलाये थे। इस प्रसंग पर 'कमल स्टील फर्नीचर्स' वाले श्री ईश्वरभाई ने झूले के लिए मनोहर कलापूर्ण सुन्दर पालना बनाकर आत्मीयता से जो सहकार दिया और प.भ. मणीकाका ने झूले की सेवा उठा कर जो प्रोत्साहन दिया उस के लिए इन दोनों को अनेकशः धन्यवाद।

संतमंडली ने इस पर्व पे उपदेश दिया था–

'भगवत्स्वरूप संत के साथ अत्यन्त विश्वासपूर्वक के सहज सरल सम्बन्ध से हमारी नित्य निरंतर रक्षा अवश्य हो ही रही है यह बात मन में सर्वथा दृढ़ करते रहना चाहिए।'

– विमल दवे

साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदास जी द्वारा योगी डिवाईन सोसाईटी,
ए-103, अशोक विहार-III, दिल्ली-110052 फोनः 518838
मुद्रण स्थानः ठक्कर प्रिंटिंग प्रेस, 2588, बस्ती पंजाबियान, सब्जी मण्डी, दिल्ली-110077